

**इलाहाबाद उच्च न्यायालय****लखनऊ****आपराधिक विविध रिट याचिका संख्या - 2355 वर्ष 2026**

नौमीलाल और अन्य

.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य, द्वारा प्रधान सचिव गृह विभाग, लखनऊ और अन्य

.....प्रतिवादी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के अधिवक्ता : आशीष कुमार

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या- 11**माननीय न्यायमूर्ति अब्दुल मोइन****माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती बबीता रानी**

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता तथा प्रत्यर्थी संख्या 1 से 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु हैं और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



2. प्रस्तावित आदेश की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी संख्या 4 को कोई नोटिस जारी न किया जाए।
3. जिस प्रथम सूचना रिपोर्ट को चुनौती दी गई है, वह दिनांक 08.01.2026 की है, जिसका एफआईआर/मुकदमा अपराध संख्या 0007 वर्ष 2026 है, यह भारतीय न्याय संहिता, 2023 की धारा 3(5), 109, 115(2) और 333 के अंतर्गत थाना असंद्रा, जिला बाराबंकी में दर्ज है।
4. याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क है कि आक्षेपित प्रथम सूचना रिपोर्ट को देखने से यह स्पष्ट होता है कि याचिकाकर्तागण पर शिकायतकर्ता और अन्य व्यक्तियों के साथ मारपीट करने का आरोप है, जिसके परिणामस्वरूप यह आक्षेपित प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई है।
5. तर्क यह है कि आक्षेपित प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोप प्रत्यक्षतः असत्य हैं।
6. उक्त प्रथम सूचना रिपोर्ट को चुनौती देने हेतु उठाए गए अन्य आधार ये हैं कि (ए) ऐसी कोई घटना कभी हुई ही नहीं, (बी) पक्षों के मध्य एक दीवानी विवाद मौजूद है, (सी) 07.01.2026 की एक घटना के लिए याचिकाकर्ता प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराने गए थे, जो

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दर्ज नहीं की गई; इसके परिणामस्वरूप उन्होंने आईजीआरएस पर एक आवेदन जमा किया, जिस पर 12.01.2026 को एक आख्या जमा की गई, जिसके साथ एक सेल्फी भी थी, जिससे यह स्पष्ट होता है कि पक्षों के मध्य एक दीवानी विवाद है, (डी) पीड़ित को कोई चोट नहीं लगी है, जैसा कि याचिका के पृष्ठ 30 पर दी गई तस्वीर को देखने से स्पष्ट होता है, (ई) चोट रिपोर्ट (पृष्ठ 51) के अनुसार याचिकाकर्ता स्वयं घायल हुए हैं, (एफ) याचिकाकर्ताओं ने विभिन्न अधिकारियों को कई आवेदन दिए हैं, फिर भी उनकी शिकायत पर कोई कार्रवाई नहीं की गई है, और (जी) उक्त प्रथम सूचना रिपोर्ट 04.06.2025 को दर्ज की गई पिछली प्रथम सूचना रिपोर्ट से प्रेरित है, जिसकी एक प्रति याचिका के अनुलग्नक-9 के रूप में संलग्न है।

7. याचिकाकर्तागण द्वारा कोई अन्य आधार नहीं लिया गया है।

8. याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए उपर्युक्त आधार स्पष्ट रूप से भ्रामक और गलत हैं। इसका कारण यह है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मुस्कान बनाम ईशान खान (सतानिया) और अन्य 2025 आईएनएससी 1287**, के प्रकरण में यह व्यवस्था दी है कि न्यायालयों से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वे प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोपों की सत्यता की जांच करने के लिए कोई संक्षिप्त परीक्षण/मिनी ट्रायल करें।

9. सुविधा हेतु **मुस्कान (उपर्युक्त)** प्रकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय की प्रासंगिक टिप्पणियों को नीचे उद्धृत किया गया है:-

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

हमारा मानना है कि उच्च न्यायालय ने विधि के मामले में त्रुटि की है, जब उसने शिकायतों और एफआईआर में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता या अविश्वसनीयता के संबंध में जांच प्रारम्भ कर दी। सामान्यतः किसी एफआईआर को रद्द करने हेतु, यह दिखाना आवश्यक होता है कि अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है। मौजूदा प्रकरण में शिकायतों और एफआईआर को एक साथ पढ़ने पर यह देखा जा सकता है कि प्रथम दृष्टया उत्पीड़न और दहेज की मांग के आरोप बनते हैं, इसके बावजूद उच्च न्यायालय ने निजी प्रतिवादियों के विरुद्ध एफआईआर को मुख्य रूप से इस आधार पर रद्द कर दिया कि अपीलकर्ता द्वारा पहले दाखिल की गई दो शिकायतों में 22.07.2021 और 27.11.2022 को हुई विशिष्ट घटनाओं का जिक्र नहीं था, और बाद में एफआईआर में उनका उल्लेख मात्र एक बाद का विचार था, और यह प्रतिवादी संख्या 1/पति द्वारा अपीलकर्ता को भेजे गए विधिक सूचना का एक जवाबी कदम था, क्योंकि वह अपने वैवाहिक घर वापस नहीं आ रही थी। हमारी सुविचारित राय में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाई गई यह कार्यप्रणाली एक 'मिनी ट्रायल' (संक्षिप्त परीक्षण) चलाने के बराबर है।

10. माननीय उच्चतम न्यायालय ने सोमजीत मल्लिक बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य 2024 आईएनएससी 772 के प्रकरण में निम्नलिखित निर्णय दिया है:

18. यह एक स्थापित कानूनी सिद्धांत है कि एफआईआर सभी आरोपों का कोई विश्वकोश नहीं होती। इसलिए यह जाँचने के लिए कि क्या कोई एफआईआर किसी संज्ञेय अपराध के घटित होने को दर्शाती है, आरोपों में किसी कमी को नहीं, अपितु उसमें निहित आरोपों के मूल सार को देखा जाना चाहिए, ताकि यह ज्ञात हो सके कि प्रथम दृष्टया कोई संज्ञेय अपराध हुआ

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

है या नहीं। इस चरण पर न्यायालय को यह निर्धारित करने की आवश्यकता नहीं होती कि वास्तव में कौन-सा विशिष्ट अपराध किया गया है। यह केवल जाँच पूर्ण होने के पश्चात आरोप विरचित करते समय जब जाँच के दौरान एकत्र की गई सामग्री न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होती है तो न्यायालय को यह राय बनानी होती है कि अभियुक्त पर किस अपराध हेतु अभियोग चलाया जाना चाहिए। उससे पूर्व यदि न्यायालय संतुष्ट हो, तो वह अभियुक्त को दोषमुक्त भी कर सकता है। अतः जब एफआईआर में अभियुक्त की ओर से किसी बेईमान आचरण का आरोप लगाया गया हो और यदि वह आरोप उपलब्ध सामग्री द्वारा समर्थित हो, जिससे किसी संज्ञेय अपराध का घटित होना प्रकट होता हो तो एफआईआर को रद्द करके जाँच प्रक्रिया को बाधित नहीं किया जाना चाहिए।

11. **सोमजीत मलिक (उपर्युक्त)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को पढ़ने से यह बात सामने आती है कि जब किसी प्रथम सूचना रिपोर्ट से किसी संज्ञेय अपराध के होने का पता चलता है, तो उस प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोपों के मूल तत्व को देखना आवश्यक होता है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि प्रथम दृष्टया कोई संज्ञेय अपराध हुआ है या नहीं। इस चरण पर न्यायालय को यह तय करने की आवश्यकता नहीं होती कि वास्तव में कौन-सा विशिष्ट अपराध किया गया है। इसलिए जब प्रथम सूचना रिपोर्ट में अभियुक्त द्वारा किसी संज्ञेय अपराध के किए जाने का आरोप लगाया गया हो, तो प्रथम सूचना रिपोर्ट को रद्द करके जाँच में बाधा नहीं डालनी चाहिए।

12. वैसे भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **संजय कुमार गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 2025 लाइव लॉ (एससी) 1170** के प्रकरण में यह अभिनिर्धारित किया है कि जहाँ

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

प्रथम सूचना रिपोर्ट के अवलोकन से कोई संज्ञेय अपराध बनता प्रतीत होता है, वहाँ उच्च न्यायालयों से हस्तक्षेप करने की अपेक्षा नहीं की जाती है।

13. सुविधा के लिए **संजय कुमार गुप्ता (उपर्युक्त)** के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों को नीचे (प्रस्तर 6 और 7) पुनः प्रस्तुत किया गया है:

6. उच्च न्यायालय ने एफआईआर रद्द करने के लिए अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से मना कर दिया, फिर भी उसने अभियुक्त व्यक्तियों अर्थात् इस प्रकरण में निजी प्रत्यर्थी को आरोपपत्र दाखिल होने तक गिरफ्तारी से पूरी सुरक्षा दे दी, हमारी राय में इससे प्रकरण की जाँच को गंभीर नुकसान पहुँचा है। इस प्रकार के निर्देश के पीछे न तो कोई तर्क है और न ही कोई औचित्य।

7. इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि उत्तर प्रदेश राज्य में गिरफ्तारी-पूर्व जमानत के प्रावधान लागू हैं। इसलिए किसी अपराध का अभियुक्त कोई भी व्यक्ति यदि ऐसी सुरक्षा पाना चाहता है, तो उसे सर्व प्रथम सक्षम सत्र न्यायालय में जाकर उचित उपचार अपनाना होगा। किसी आपराधिक रिट याचिका में गिरफ्तारी-पूर्व जमानत की राहत देना, जबकि कार्यवाही को रद्द करने के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इनकार करना, पूर्ण रूप से अस्वीकार्य और अनुमेय नहीं है, जैसा कि इस न्यायालय ने निहारिका इंफ्रास्ट्रक्चर (पी) लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य (2021) 19 एससीसी 401 के प्रकरण में कहा है :-

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"22. जैसा कि इस न्यायालय ने हेमा मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 4 एससीसी 453 : (2014) 2 एससीसी (क्रि) 363], के प्रकरण में कहा है, यद्यपि उच्च न्यायालयों के पास अनुच्छेद 226 के अंतर्गत बहुत व्यापक शक्तियाँ हैं, फिर भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग न्याय के हनन को रोकने और अधिकारियों द्वारा अभियुक्त व्यक्तियों की मनमाने ढंग से गिरफ्तारी करने की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए किया जाना चाहिए। इसमें आगे यह भी कहा गया है कि अनुच्छेद 226 के अंतर्गत ऐसी याचिका पर सुनवाई करते समय उच्च न्यायालय को दो हितों के मध्य संतुलन बनाए रखना होता है। एक ओर न्यायालय को यह सुनिश्चित करना होता है कि अनुच्छेद 226 के अंतर्गत ऐसी शक्ति का प्रयोग इतनी उदारता से न किया जाए कि यह धारा 438 दण्ड प्रक्रिया संहिता की कार्यवाही में बदल जाए। इसमें आगे यह भी कहा गया है कि दूसरी ओर जब भी उच्च न्यायालय को किसी विशेष प्रकरण में यह लगता है कि यदि गिरफ्तारी से पूर्व सुरक्षा नहीं दी जाती है, तो यह न्याय का घोर विफलता होगी और विचारण लंबित होने के दौरान गिरफ्तारी का कोई भी मामला बिल्कुल नहीं बनता है, तो उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए अग्रिम जमानत के रूप में अनुतोष देने हेतु स्वतंत्र होगा, बशर्ते यह ध्यान रखा जाए कि इस शक्ति का प्रयोग केवल उन्हीं प्रकरणों में बहुत संयम से किया जाना चाहिए जहाँ यह नितांत आवश्यक और उचित हो। यद्यपि गिरफ्तारी न करने या "कोई बलपूर्वक कार्रवाई नहीं" जैसा कोई भी व्यापक अंतरिम आदेश यांत्रिक रूप से और एक नियमित प्रक्रिया के तौर पर पारित नहीं किया जा सकता है।"

23. जहाँ तक धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता और/या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत एफआईआर/शिकायत को रद्द करने की याचिकाओं को खारिज करते समय यह राय

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

देते हुए कि एफआईआर/शिकायत को रद्द करने का कोई प्रकरण नहीं बनता है, पारित किए गए उस आदेश का प्रश्न है जिसमें यह निर्देश दिया गया हो कि अंतिम रिपोर्ट/आरोप पत्र दाखिल होने तक और/या जांच के दौरान गिरफ्तार न किया जाए (या "कोई बलपूर्वक कार्रवाई न की जाए") अथवा जांच पूर्ण होने तक गिरफ्तार न किया जाए तो ऐसा आदेश पूर्ण रूप से अस्वीकार्य है।

14. तदनुसार संजय कुमार गुप्ता (उपर्युक्त), सोमजीत मल्लिक (उपर्युक्त) और मुस्कान (उपर्युक्त) के मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि को ध्यान में रखते हुए, तथा अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और प्रथम सूचना रिपोर्ट की सामग्री पर विचार करते हुए यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्तागण के विरुद्ध एक संज्ञेय अपराध बनता है, और इसलिए आक्षेपित एफआईआर में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए आधारों पर विचार करना एक 'लघु-विचारण' (मिनी ट्रायल) आयोजित करने के समान होगा।

15. उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए रिट याचिका **खारिज** की जाती है।

18 मार्च, 2026

ए कटियार

(न्यायमूर्ति श्रीमती बबिता रानी) (न्यायमूर्ति अब्दुल मोईन)

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।